# विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NS (M)-16/85

वर्ष १५ ◎ बम्बई ◎ बुद्धवर्ष २५२९ ◎ श्रावण पूर्णिमा [ अधिक ] ◎ दि. ३०-८-१९८५ ◎ अंक ३

## धम्म वाणी

**यो हि पस्सति सद्धम्मं सो मं पस्सति पण्डितो।**
**अपस्समानो सद्धम्मं, मं पस्सं पि न पस्सति॥**

–थेरगाथा अट्ठकथा २/८.

जो समझदार व्यक्ति सद्धर्म को देखता है, वही मुझे देखता है। जो सद्धर्म को नहीं देखता, वह मुझे देखता हुआ भी नहीं देखता।

---

सही दर्शन

## वंदना

### (२)

भगवानके जीवनकाल की एक और घटना।

कुरु प्रदेशका कम्मासधम्म निगम। यहाँ का निवासी ब्राह्मण गृहस्थ मागंदीय। उसकी देवकन्या सदृश सर्वांग सुन्दरी वर्णा मागंदीया। अनेक लोग उस रूपवतीको अपनी जीवन-संगिनी बनाने के लिए आतुर थे। परंतु ब्राह्मण का हठ था कि वह अपनी रूपसी कन्या का हाथ उसीको देगा जो कि उसीकी तरह सुवर्ण वर्णा हो और अद्वितीय रूपवान हो। अपने इस हठ को पूरा करने के लिए वह योग्य वर की खोजमें लगा रहा। पर बहुत समय तक सफलता नहीं मिली।

एक दिन वह समीप के वनखण्डमें से गुजरते हुए ब्राह्मण भारद्वाज के आश्रमके पाससे निकला। वहाँ किसी वृक्ष की छायामें भगवान बुद्ध ध्यानावस्थित बैठे थे। उनके सुवर्ण वर्ण सुंदर शरीरसे अनुपम प्रभा प्रस्फुटित हो रही थी। ऐसा रूपशोभायुक्त व्यक्ति उसने कभी नहीं देखा था। वह अत्यंत प्रभावित हुआ। भगवानमें उसे अपनी सलोनी कन्या के मनोवांछित वर के दर्शन हुए। यह व्यक्ति कहीं विवाहके प्रस्तावको ठुकरा न दे, इसलिए ब्राह्मणने यही उचित समझा कि अपनी रूपवती कन्याको यहीं ले आए। उस मोहिनी की रूप-माधुरी देखकर यह अवश्य स्वीकृति दे देगा। उसने भगवानसे कहा, "श्रमण! यहीं ठहरें! मैं अपनी पुत्रीको ला रहा हूँ जो कि तुम्हारी जीवन-संगिनी बनने योग्य है।" इतना कहकर वह दौड़ा दौड़ा घर गया। अपनी पत्नीसे बोला, "भद्रे! अपनी रूपवती कन्या के लिए मैंने बहुत उपयुक्त वर खोज लिया है। तू मागंदीयाको सजा-धजाकर साथ ले चल। आज हमारी मंशा अवश्य पूरी होगी।"

माँ ने बेटी को सुगंधित जलसे स्नान करवाया। बहुमूल्य वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित किया। कुमारी मागंदीयाका रूप और अधिक निखर आया। दोनों उसे लेकर भारद्वाज के आश्रम की ओर गए। देखा भगवान वहाँ नहीं थे। ब्राह्मण की निकम्मी बात सुनकर वह वहाँ से उठकर आगे चले गए थे। ब्राह्मण को बड़ी निराशा हुई। उसने पथ पर भगवान के पद-चिन्ह देखे और बोला, "श्रमण इसी रास्ते गया है। चलो उसे ढूंढ लें।" ब्राह्मण की पत्नी बहुत विदुषी थी। वेद-वेदांगों में पारंगत थी। लक्षण शास्त्रकी परम ज्ञाता थी। भगवान जिस तृण बिछे स्थानपर बैठे थे, उसे ध्यानसे देखा। वे जिस रास्ते गए, उस पर पड़े पद-चिन्होंको बड़े ध्यानसे देखा और अपने पतिसे कहा, "प्रिय! हमारी मनोकामना पूर्ण होनेवाली नहीं है। इस आसन पर बैठनेवाला व्यक्ति वीतकाम है। इन पद-चिन्होंवाला व्यक्ति राग, द्वेष, मोहसे सर्वथा विमुक्त है। यह किसी नारीको स्वीकार नहीं कर सकता।" ब्राह्मण को बुरा लगा। मंगलकी बेला कैसी अमंगल वाणी बोल रही है! उसे अपने उद्देश्यकी पूर्ति का पूरा विश्वास था। वह भगवानको ढूंढते हुए आगे बढ़ा।

कुछ दूरी पर उसे भगवानके दर्शन हुए। मागंदीय ब्राह्मण ने आतुरतावश अपनी बेटी का हाथ पकड़कर भगवानकी ओर बढ़ाते हुए कहा, "महाश्रमण! मेरी इस रूपवती कन्याको स्वीकार करें। आप दोनोंका रूप-सौंदर्य एक दूसरे के सर्वथा उपयुक्त है। इसके साथ सुखी गृहस्थ जीवन बिताइए।"

भगवानने कहा, "ब्राह्मण! मैं गृहस्थ-जीवनसे मुक्त हो चुका हूँ। मैं वीतकाम हूँ। वीतराग हूँ। अपनी कन्याका विवाह कहीं और करो।"

जब ब्राह्मण बार-बार जिद्द करता रहा तो भगवानने कहा, ब्राह्मण मैं "अर्हंत हूँ। सम्यक संबुद्ध हूँ। संबोधि प्राप्त करते हुए बोधि-वृक्षके तले जब मारदेव मुझे नहीं हरा सका तो मुझे साधनाच्युत करनेके लिए उसने अपनी तीन सुंदरी पुत्रियों को भेजा। तृष्णा, रती और रागणी। उन परम मोहिनी देवकन्याओं के प्रति भी मेरे मनमें रंचमात्र वासना नहीं जागी। यह तो मानवी शरीर, भिन्न भिन्न प्रकारकी गंदगियोंसे भरा हुआ। ब्राह्मण! मैं समस्त वासनाओं से सर्वथा मुक्त हो चुका हूँ।"

ब्राह्मणी भगवानकी वाणी से अत्यंत प्रभावित हुई। उनके प्रभामंडल मंडित शांतिकांतियुक्त चेहरे ने उसे आश्वस्त किया कि यह व्यक्ति सचमुच सम्यक् संबुद्ध है। अर्हंत है। उसने अपने पतिको बहुत समझाया कि वह इस व्यक्तिसे पुत्रीके संबंधकी आशा त्याग दे। हमारा सौभाग्य है कि पुत्री के लिए वर खोजनेके प्रयत्नमें हम सम्यक् संबुद्ध के संपर्क में आए। हम इनसे मुक्तिका मार्ग सीखकर मानव जीवन सार्थक करें। ब्राह्मण ने पत्नी की बात मानी। पुत्रीको अपने छोटे भाई चुल्ल मागण्दीयके हवाले करते हुए कहा कि उचित वर खोज कर इसके हाथ पीले कर देना। और स्वयं अपनी पत्नी सहित भगवानके पास रुक गया। उनसे विपश्यना साधना सीखकर दोनों पति-पत्नी पुरुषार्थ करते हुए अर्हंत अवस्थाको प्राप्त हुए।

ब्राह्मण-पुत्री मागण्दीया को अपने रूप का बड़ा अभिमान था। उसे लगा की भगवानने उसके रूपका घोर अनादर किया है। कुछ समय पश्चात् वह कौशांबी नरेश उदयनसे ब्याही गयी और उनकी तीन पटरानियों में से एक हुई। परंतु उसके मन में भगवानसे बदला लेने की द्वेषभावना प्रज्वलित ही रही। वहाँ उसने देखा की रानी श्यामावती भगवानके प्रति अत्यंत श्रद्धालु है। उनके उपदेशोंका पालन करती है। मागण्दीयाने अनेक षडयंत्र रचे। उदयनके मनमें श्यामावतीके प्रति संदेह पैदा कर दिया। उसे लांछित किया और अंततः उसकी मृत्यु करवा दी। समय पाकर सच्चाई प्रकट हुई तो उदयन ने मागण्दीयाको घोर दण्ड दिया।

मागण्दीयाके माता-पिता भगवानका निरामिष दर्शन कर सके और जीवनमुक्त हो गए। परन्तु मागण्दीयाने भगवानका सामिष दर्शन ही किया और अपना अमंगल कर बैठी।

एक और घटना।

वक्कलि नामका एक विद्वान उपासक भगवान बुद्धके आश्रममें गया। महापुरुषों के ३२ लक्षणों से परिपूर्ण तथागतके सुन्दर तेजस्वी शरीर ने, उनके प्रभावशाली ओजस्वी व्यक्तित्व ने उस भावुक उपासक को सहज ही आकर्षित कर लिया। उन भगवान अंगिरस के अंग अंग से जो प्रभा-रश्मियाँ प्रस्फुटित हो रही थीं, उन्होने वक्कलि को भावाभिभूत कर दिया। उनके अंतर से उमड़नेवाली अपरिमित मैत्री और करुणा तरंगों का गहरा प्रभाव भी था ही। वक्कलिने चाहा कि वह भगवान की इस अनुपम रूप-राशि का सदैव दर्शन करता रहे। अतः घर से बेघर हो, दाढ़ी-मूंछ मुंडाकर प्रव्रजित हुआ और भिक्षु संघ में सम्मिलित हो गया। केवल इसीलिए कि उसे भगवानका सान्निध्य-सुख अधिक से अधिक प्राप्त हो सके। अब वह भक्तिके आवेश में और काम छोड़कर रस-लोलुप भौरे की तरह भगवानकी रूप-माधुरीके चारों ओर मँडराने लगा। न समाधि द्वारा चित्त-एकाग्रता का कोई अभ्यास और न ही विपश्यना द्वारा प्रज्ञा जाग्रत करनेका कोई प्रयास। जब देखो तब भगवानके सामने बैठा हुआ उनके प्रभामंडित चेहरे को अपलक, निर्निमेष देखता रहे। करुणामय भगवानने देखा कि यह नया भिक्षु भक्ति-भावावेशमें इतना अंधा हो गया है कि धर्म का सत्य स्वरूप समझ ही नहीं पा रहा। उन्होंने उसे फटकारते हुए कहा, "अरे नादान भिक्षु। मेरे इस शरीरको पागलों की तरह क्या देख रहा है? मेरी इस रुप-काया में क्या रखा है यह भीतरसे उतनी ही गंदी हैं जितना कि किसी भी अन्य की काया। रुप का दर्शन मूर्खों को आनंदित करनेवाला होता है। यदि मुझे देखना है तो मेरे भीतर समाए हुए धर्म को देख! जो धर्म को देखता है वही मेरे सच्चे स्वरुप को देखपाता है जो सही मानेमें मुझे देखता है वह मेरे भीतर समाए हुए सत्य धर्म को ही देखता है बाह्य शरीर को नही"

यो खो धम्मं पस्सति, सो मं पस्सति
यो मं पस्सति, सो धम्मं पस्सति

और फिर कहा,

"अपस्समानो सद्धम्मं, मं पस्सपि न पस्सति।"

यदि सद्धर्म को नहीं देखता है तो मुझे देखते हुए भी नहीं देख रहा है।

महाकारुणिक की इस धर्म फटकार से अंधभक्ति के भावावेश में डूबे हुए वक्कलि भिक्षु के प्रज्ञा-चक्षु खुले। उसे भगवानकी यह बात समझमें आई कि वस्तुतः वे धर्म के मूर्त स्वरूप हैं। अतः उनका दर्शन यदि काया-दर्शन तक ही सीमित रहे तो यह पागलपन होगा। उनके दर्शन में सत्यधर्म का दर्शन होना ही चाहिए। और यह सांदृष्टिक निर्वाण-धर्म तो अन्तर्मुखी होकर स्वंय अपने ही भीतर देखने के लिए है। बाहर नहीं। बात उसकी समझमें आ गई। विपश्यना-प्रज्ञा द्वारा अपने भीतर का सत्य-धर्म-दर्शन किए बिना जीवन भर बुद्ध के चीवर को पकड़े हुए उनके पीछे लगे रहनेवाला भी उनसे कोसों दूर है। परन्तु उनसे हजार योजन दूर कहीं किसी एकांत में अन्तर्मुखी होकर सत्य-धर्म का अपने भीतर साक्षात्कार कर लेनेवाला बुद्धके अत्यंत समीप है। धर्म का साक्षात्कार ही बुद्ध का साक्षात्कार है। धर्म का सान्निध्य ही बुद्धका सान्निध्य है। आखिर बुद्ध क्या है? "सम्यक सम्बोधि" का जीता जागता स्वरूप ही बुद्ध है। इसीलिए तो तथागत को धर्मकाय और ब्रह्मकाय कहते हैं। धर्मभूत और ब्रह्मभूत कहते हैं।

"तथागतस्स अधिवचनं धम्मकायो इतिपि, ब्रह्मकायो इतिपि धम्मभूतो इतिपि ब्रह्मभूतो इतिपि।"

यह बात समझमें आते ही वक्कलि पर छाया हुआ भक्ति-भावावेशका अंध घटाटोप दूर हुआ। सत्य धर्म का आलोक

प्रकाशित हुआ। उसने भगवानसे अन्तर्मुखी होनेकी सरल विधि सीखी, विपश्यना साधनाका कर्मस्थान सीखा और दूर एकांत में जाकर अभ्यास करने लगा। पुराने भक्ति-भावावेश ने बीच बीच में कुछ अड़चनें पैदा कीं परन्तु अन्ततः वह सच्चा साधक निर्वाण का साक्षात्कार कर कृतकृत्य हुआ। सभी आश्रवों, क्लेशों, संयोजनों और बंधनों को दूर कर मृत्यु के पूर्व इसी जीवनमें विमुक्त अवस्था को प्राप्त हुआ। जब तक साकार देहकी रूप-माधुरी का दर्शन करता रहा तब तक उलझा ही रहा। ज्यो ही धर्म तरंगों के स्वरूप पर भगवानका दर्शन किया याने सत्यकी अनुभूति की तो सचमुच मुक्त हो गया।

❁ ❁ ❁

और एक महत्वपूर्ण घटना।

स्वयं बोधिसत्व सिद्धार्थ गौतम भी जब धर्म दर्शन कर सके तो ही बुद्ध बन सके। वैशाख-पूर्णिमा की रात, निरंजरा नदीके तट पर, बोधिवृक्षके तले जब विपश्यना साधनाके अभ्यास द्वारा अनेक पूर्व जन्मोंका साक्षात्कार हुआ तो जाना कि इस भव संसार में बार बार जन्म दिलानेवाला, हर मृत्यु पर एक नए शरीर रूपी घरका निर्माण कर देनेवाला गृहकारक कौन है? इसकी खोजमें न जाने कितने जन्म गंवाए। पर सफलता नहीं मिली। बार बार किसी न किसी लोक में दुःखमय जीवन मिलता ही गया। क्योंकि किसी देहधारी साकार सृजनकर्ता की गवेषणा चल रही थी। जब विपश्यना द्वारा सत्य धर्म का याने ऋत का दर्शन हुआ तो बात समझ में आ गयी। सत्य ही तो ईश्वर है। परम सत्य ही तो परमेश्वर है। अनुभूति के स्तर पर कुदरत का सारा कानून स्पष्ट हो गया। कैसे भव संसार बनता है? बढ़ता हैं? कैसे घटता है? समाप्त हो जाता है! यों सत्य का दर्शन करके सम्यक संबोधि प्राप्त हुई, भवचक्र से सर्वथा विमुक्ति प्राप्त हुई।

विपश्यना शिविरोंके दौरान ध्यान की अवस्था में कभी किसी साधक को भ्रामक साकार रूप-दर्शन होने की घटना घट जाती है जो कि अन्तर्मन पर पड़ी अपनी अपनी परंपरागत मान्यताओं का बाह्य प्रक्षेपण मात्र होता है। अतः सच्चाई से सर्वथा दूर होता हैं। जैसे किसी को ध्यान के समय ऐसी 'आत्मा' के दर्शन हो जाते हैं जो कि अपने शरीर के आकार और मापकी होती है। किसी को हृदय की अंधेरी गुफा में 'अंगुष्ठ प्रमाण' 'आत्मा' के, किसी को 'तिल' के समान और किसी को 'बाल' के समान 'आत्मा' के दर्शन हो जाते हैं। भारतीयोंको बहुधा किसी भक्तिमार्गी पुस्तकके चित्रकार की उर्वर कल्पना के अनुरूप शरीरके नग्न उर्ध्व भाग पर औरतोंकी तरह गहने लादे हुए बिना दाढ़ी-मूंछ वाले ईश्वर के दर्शन हो जाते है तो पश्चिम के किसी साधकको लंबा चोगा पहने हुए सफेद लंबी दाढ़ी-मूछवाले ईश्वर के। इनमें से किसी दर्शन द्वारा साधक के जरा भी मनोविकार दूर नहीं होते। यही इसकी भ्रामकता को स्पष्ट करनेके लिए पर्याप्त है। दूसरी ओर जब साधक अपने शरीर-चित्त प्रपंच का यथाभूत ज्ञानदर्शन करता हुआ, उसके अनित्य-स्वभावका स्वानुभव करता हुआ अपने विकारों से प्रत्यक्ष छुटकारा पाता है और इंद्रियातीत नित्य शाश्वत परम सत्य का दर्शन करके अपनी चित्त-निर्मलता को पुष्ट कर लेता है तो इसीसे स्पष्ट हो जाता है कि किसी काल्पनिक रूप-दर्शन में नहीं, बल्कि अंतर्मुखी हो स्वानुभूति द्वारा निराकार धर्म के, सत्य के दर्शन करनेमें ही हमारी स्वस्ति-मुक्ति समायी हुई है। इसी में हमारा सही मंगल है, सही कल्याण है!

कल्याण मित्र,
स. ना. गो.

❁ ❁ ❁

## श्री हंसराज गुप्तका देहावसान

दिल्ली के भूतपूर्व महापौर, विख्यात उद्योगपति, शिक्षा-संस्थाओं के उन्नायक और समाज-सेवी श्री हंसराज गुप्त का ८३ वर्ष की अवस्था में देहान्त हो गया। वह बड़े ही शान्त, मधुर भाषी और सेवा-भावी थे। उनकी पौरुषग्रंथी का आपरेशन हुआ था। उसके बाद उनका स्वास्थ्य ठीक हुआ नहीं। वह विपश्यना के कई शिविरों में सम्मिलित हुए थे। उसका उनके मन पर इतना प्रभाव पड़ा था कि वह प्रायः मुझसे कहा करते थे कि मैं अपनी सारी शिक्षा-संस्थाओं में प्रातःकालीन प्रार्थना के साथ आना-पान की व्यवस्था करना चाहता हूं। चैल में हुए शिविर के बाद उनकी अभिरुचि विपश्यना में और बढ़ गई थी। कहते थे, आजकल ध्यान खूब लगता है।

वह लगभग दो ढाई महीने अस्वस्थ रहे, पर जब कभी कोई घर का सदस्य अथवा चिकित्सक उनसे पूछते थे कि कोई कष्ट है तो वह मुस्कराकर कहते थे, नहीं।

मृत्यु शैया पर उनके चेहरे पर अपूर्व शान्ति थी। महा-निद्रा के बाद अपने श्वेत केश और दाढ़ी मुछों तथा चेहरे को भाव-भंगिमा से वह ऋषि-तुल्य दिखाई देते थे। मृत्यु को उन्होंने कभी शत्रु नहीं, मित्र माना, और उसकी गोद में जाने का समय आया तो ऐसे चले गये, मानो बड़े आनंद में हों।

ऐसे व्यक्ति जहां भी रहते हैं, आनंद में रहते हैं।

श्री यशपाल जैन

❁ ❁ ❁

## पूज्य गुरुजी का बंबईमे सार्वजनिक प्रवचन

दि. १५-९-८५ सुबह ९ से १० पुराने साधकोंके साथ सामुहिक साधना, सुबह १० से ११ सार्वजनिक प्रवचन, ११ बजे प्रश्नोत्तर

**स्थान** : सोफिया कॉलेज, भुलाभाई देसाई रोड,
पेडर रोड, बंबई-४०००२६

**संपर्क** : श्री रोहित डी. मेहता
C/o मालाणी रणछोडदास ॲण्ड कं.,
युसुफ बिल्डिंग, ३ रा माला, म. गांधी रोड, बंबई-२३.
फोन : ऑफिस २५६२१५, ३१४३७६, ३१४३८६
निवास ८२२७५७.

## पूज्य गुरुजीके नागपुर / वर्धा के कार्यक्रम

**नागपुर – ६-१०-८५**

प्रातः ८ से ९ साधकों के साथ साधना।

स्थान– राधाकृष्ण मंदिर, वर्धमाननगर।

संध्या– ४-३० से ५-३०, कॉनवोकेशन हॉल प्रांगण में सार्वजनिक प्रवचन। (सभी पुराने साधक आमंत्रित हैं।

संपर्क : श्री गोवरधनदास केला,
C/o. सेंट्रल इंजिनियरिंग कॉर्पोरेशन,
अभ्यंकर रोड, सीतावर्डी, नागपुर-४४००१२
फोन : निवास– ३२७९८ तार– Kelabros

**वर्धा – ७-१०-८५**

१. प्रातः ६-१५ से ८-१५ तक गीताई मंदिर के प्रांगण में बच्चोंका कार्यक्रम।

२. दोपहर २ से ५ तक जानकीदेवी बजाज विज्ञान महाविद्यालय की नई प्रयोगशाला का भवन उद्घाटन।

३. संध्या ७ बजे शहर में सार्वजनिक प्रवचन

संपर्क : श्री एन. एस. जाजू
शिक्षा मंडल, वर्धा।
फोन : २७३४, २६०६, २८५२

---

**मैसर्स मोतीलाल बनारसीदास**
बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११० ००७.
की मंगल कामनाओं सहित
↓

## दूहा धरम रा

करली कूड़ी कल्पना, रह्यो राग मँह रत्त।
दरसन कर कै देव का, परसन हुयो प्रमत्त ॥१॥
रूप काय भगवान की, देख्या मिलै न कुच्छ।
धरम काय नै देखतां, मुक्ति मिलै परतच्छ ॥२॥
आंधी भगती मँह पड्यो, करें कल्पना मूढ।
अनुभव पर उतरे बिना, सांच न समझै गूढ़ ॥३॥
चित्रकार कै चित्र मँह, प्रभु ढूंढै मतिमूढ।
मूर्तिकार की मूर्ति मँह, ढूंढै सच्च निगूढ ॥४॥
स्थूल स्थूल सच देखता, बढ़ सूक्ष्म की ओर।
पग पग बढ़ताँ पूगगो, परम सच्च की ठौर ॥५॥
सच देखत देखत दिख्यो, परम सच्च निरवाण।
परम सच्च ही ईस है, परम सच्च भगवान ॥६॥

## दोहे धर्म के

गृहकारक की खोज में, खोए जनम अनेक।
मुक्त हुआ भवचक्र से, गृहकारक को देख ॥१॥
गृहकारक ना व्यक्ति है, गृहकारक ना देव।
निज विकार से भव बने, गृहकारक स्वयमेव ॥२॥
बार बार के जन्म का, अहंकार ही मूल।
अहंभाव तृष्णा जगे, जगे दुखद भव शूल ॥३॥
सत्य देखते देखते, अहंभाव मिट जाय।
तृष्णा की गांठें कटें, भवबंधन खुल जाँय ॥४॥
सत्य देखना होय तो, राख कल्पना दूर।
मिथ्या कूड़ी कल्पना, भरे मोह भरपूर ॥५॥
नहीं कल्पना कर सके, अंतरमन का शोध।
सच के ही आधार पर, जगे मुक्ति का बोध ॥६॥

---

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३. दूरभाष : ८६
मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक–४२२ ००७. टेलिफोन : ३०२५१ ● वार्षिक शुल्क रु. १०/–आजीवन शुल्क रु. १००/–

**विपश्यना"** 9/85

Licence No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

पो. र. नं. NS(M) 10/85

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To